INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF MANAGEMENT SOCIOLOGY & HUMANITIES

ISSN 2277 – 9809 (online)
ISSN 2348 - 9359 (Print)

An Internationally Indexed Peer Reviewed & Refereed Journal

www.IRJMSH.com
www.isarasolutions.com

Published by iSaRa Solutions

राजनीतिक दल बदल के कारण और निवारण के उपाय: भारतीय संसदीय लोकतंत्र के संदर्भ में एक राजनीतिक अध्ययन

डॉ. बृजेश स्वरुप सोनकर

असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग

कर्म क्षेत्र महाविद्यालय, इटावा (उ.प्र.)

सारांश (Abstract)

प्रस्तुत शोध-पत्र भारतीय संसदीय लोकतंत्र में राजनीतिक दल-बदल की समस्या का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अध्ययन में दल-बदल के प्रमुख राजनीतिक, आर्थिक एवं सामाजिक कारणों–सत्ता और लाभ के पद की लालसा, दलों में आंतरिक लोकतंत्र का अभाव, वैचारिक स्पष्टता की कमी तथा टिकट वितरण में पारदर्शिता का अभाव–की पहचान की गई है। संविधान की दसवीं अनुसूची (दल-बदल विरोधी कानून) के क्रियान्वयन की समीक्षा करते हुए यह स्पष्ट किया गया है कि 52वें एवं 91वें संविधान संशोधनों के बावजूद विलय प्रावधान का दुरुपयोग, व्हिप का अत्यधिक प्रयोग, सामूहिक इस्तीफों की रणनीति तथा अध्यक्ष के पद का राजनीतिकरण कानून की प्रभावशीलता को सीमित करता है। **किहोतो होलोहन** (1992), **नबाम रेबिया** (2016) और **केशम मेघाचंद्र सिंह** (2020) जैसे प्रमुख न्यायिक निर्णयों के माध्यम से सर्वोच्च न्यायालय के दृष्टिकोण का विश्लेषण किया गया है, जिसमें अध्यक्ष की शक्तियों पर अंकुश लगाने तथा स्वतंत्र निर्णयन तंत्र की आवश्यकता पर बल दिया गया है। शोध के निष्कर्ष में सुझाव दिया गया है कि अयोग्यता का निर्णय राष्ट्रपति/राज्यपाल द्वारा निर्वाचन आयोग की सलाह पर किया जाए, तीन महीने की वैधानिक समय-सीमा निर्धारित की जाए, व्हिप का दायरा सीमित किया जाए तथा दल-बदलुओं को शेष कार्यकाल तक चुनाव लड़ने से प्रतिबंधित किया जाए। यह अध्ययन दल-बदल की समस्या को नियंत्रित कर संसदीय स्थिरता एवं जनादेश की पवित्रता सुनिश्चित करने के लिए व्यावहारिक नीतिगत उपाय प्रस्तुत करता है।

मुख्य शब्द (Keywords) - दल-बदल, 10वीं अनुसूची, दल-बदल विरोधी कानून, संसदीय लोकतंत्र, अध्यक्ष की भूमिका, न्यायिक समीक्षा, आंतरिक लोकतंत्र, चुनावी सुधार, राजनीतिक स्थिरता, भारत।

प्रस्तावना (Introduction)

भारतीय संसदीय लोकतंत्र में दल-बदल (Defection) का अर्थ निर्वाचित सांसद या विधायक द्वारा उस राजनीतिक दल को छोड़कर किसी अन्य दल में शामिल होना या दल के निर्देशों के विरुद्ध मतदान करना है, जिसकी सदस्यता के आधार पर उन्होंने चुनाव जीता था। यह प्रवृत्ति व्यक्तिगत लाभ, मंत्री पद या राजनीतिक दबाव से प्रेरित होती है और लोकतांत्रिक जनादेश को कमजोर करती है। दल-बदल की संस्कृति का सबसे चर्चित उदाहरण 1967 में हरियाणा से जुड़ा है। उस वर्ष राज्य की पहली विधानसभा चुनावों में हसनपुर (अब होडल) सीट से निर्दलीय विधायक चुने गए गया लाल ने मात्र पंद्रह दिनों में तीन बार दल बदला–पहले कांग्रेस में शामिल हुए, फिर संयुक्त मोर्चे में गए, फिर कांग्रेस लौटे और अंत में पुनः संयुक्त मोर्चे में चले गए। तत्कालीन मुख्यमंत्री **राव बीरेंद्र सिंह** ने उन्हें मीडिया के समक्ष प्रस्तुत करते हुए कहा–"गया राम अब आया राम हो गए हैं।" इसी घटना से "आया राम, गया राम" मुहावरा भारतीय राजनीति में प्रचलित हो गया, जो अवसरवादी दल-बदल का प्रतीक बन गया। 1967 से 1971 के बीच संसद और विभिन्न राज्य विधानसभाओं में लगभग 1,900 दल-बदल के मामले दर्ज हुए, जिनके कारण 32 राज्य सरकारें गिर गईं और 212 दल-बदलू विधायक/सांसद मंत्री बने। इस अस्थिरता ने लोकतंत्र की नींव को चुनौती दी, जिसके परिणामस्वरूप 1968 में यशवंतराव चव्हाण समिति गठित हुई, जिसने दल-बदल को नियंत्रित करने की सिफारिश की।

इस समस्या के समाधान के लिए राजीव गांधी सरकार ने 1985 में संविधान (बावनवाँ संशोधन) अधिनियम पारित किया, जो 15 फरवरी 1985 को राष्ट्रपति की स्वीकृति के बाद 1 मार्च 1985 से प्रभावी हुआ। इस संशोधन द्वारा संविधान में दसवीं अनुसूची जोड़ी गई, जिसे लोकप्रिय रूप से दल-बदल विरोधी कानून कहा जाता है। दसवीं अनुसूची के तहत कोई सदस्य अयोग्य घोषित किया जा सकता है यदि वह स्वेच्छा से अपने दल की सदस्यता छोड़ दे, या दल के व्हिप के विरुद्ध मतदान करे अथवा अनुपस्थित रहे (और दल 15 दिनों के भीतर इसे माफ न करे)। स्वतंत्र सदस्य चुनाव के बाद किसी दल में शामिल होने पर तथा नामित सदस्य छह माह बाद दल में शामिल होने पर भी अयोग्य हो जाते हैं। मूल रूप से, एक-तिहाई सदस्यों के विभाजन (split) और दो-तिहाई सदस्यों के विलय (merger) को अयोग्यता से छूट दी गई थी। अध्यक्ष/सभापति इन मामलों का निर्णय करते हैं। 2003 में अटल बिहारी वाजपेयी सरकार द्वारा पारित 91वें संविधान संशोधन अधिनियम ने कानून को और सख्त बनाया। इसमें दसवीं अनुसूची

के पैराग्राफ 3 (एक-तिहाई विभाजन की छूट) को हटा दिया गया; अब केवल दो-तिहाई सदस्यों के विलय को संरक्षण प्राप्त है। साथ ही, अनुच्छेद 75(1A) और 164(1A) के तहत केंद्रीय एवं राज्य मंत्रिपरिषद का आकार लोकसभा/विधानसभा की कुल सदस्य संख्या के 15 प्रतिशत तक सीमित किया गया (छोटे राज्यों में न्यूनतम 12 मंत्री)। अनुच्छेद 75(1B), 164(1B) और 361B के माध्यम से दल-बदलू सदस्य को मंत्री पद या कोई लाभकारी राजनीतिक पद धारण करने से तब तक रोका गया जब तक वे पुनः निर्वाचित न हों।

वर्तमान में दल-बदल विरोधी कानून की प्रासंगिकता बनी हुई है, क्योंकि हाल के वर्षों में विभिन्न राज्यों में बड़े पैमाने पर दल-बदल की घटनाएँ देखी गई हैं, जिन्होंने संसदीय लोकतंत्र की स्थिरता और जनादेश की पवित्रता पर प्रश्नचिह्न लगाए हैं। उदाहरण के लिए, 2019 में कर्नाटक में कांग्रेस-जेडी (एस) गठबंधन सरकार 13 कांग्रेस और 3 जेडी (एस) विधायकों के इस्तीफे के बाद गिर गई। महाराष्ट्र में 2022 में शिवसेना का विभाजन और एकनाथ शिंदे गुट का सत्ता में आना, मध्य प्रदेश में 2020 में ज्योतिरादित्य सिंधिया सहित विधायकों के दल-बदल से कांग्रेस सरकार का पतन, तथा असम, अरुणाचल प्रदेश, गोवा आदि राज्यों में बड़े पैमाने पर दल-बदल की घटनाएँ उल्लेखनीय हैं। 2024-2026 के बीच भी पश्चिम बंगाल में तृणमूल कांग्रेस के दर्जनों विधायक और सांसद दल छोड़कर अन्य दलों में शामिल हुए, दिल्ली में आम आदमी पार्टी के राज्यसभा सदस्यों का दल-बदल, तथा महाराष्ट्र में शिवसेना (यूबीटी) के सांसदों का शिंदे गुट में विलय जैसी घटनाएँ सामने आईं। एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म्स (ADR) के आंकड़ों के अनुसार, 2014-2021 के बीच कांग्रेस से सबसे अधिक विधायक/सांसद (लगभग 35 प्रतिशत) दल-बदल हुए, जबकि भाजपा सबसे बड़ी लाभार्थी रही। ये घटनाक्रम न केवल सरकारों की स्थिरता को प्रभावित करते हैं, बल्कि मतदाताओं के जनादेश का अपमान करते हैं, दलीय अनुशासन को कमजोर करते हैं और संसदीय लोकतंत्र में विश्वास को ठेस पहुँचाते हैं। दसवीं अनुसूची के बावजूद अध्यक्ष की भूमिका, विलय प्रावधान के दुरुपयोग और निर्णयों में देरी जैसी कमियाँ कानून की प्रभावशीलता पर प्रश्न उठाती हैं। इस शोध पत्र में इन्हीं पृष्ठभूमियों के आधार पर भारतीय संसदीय लोकतंत्र में दल-बदल के कारणों का विश्लेषण किया जाएगा तथा निवारण के प्रभावी उपायों पर चर्चा की जाएगी।

शोध की आवश्यकता और महत्व (Need and Significance of the Research)

भारतीय संसदीय लोकतंत्र में दल-बदल की समस्या लंबे समय से राजनीतिक अस्थिरता का प्रमुख कारण रही है। यद्यपि 1985 के 52वें संविधान संशोधन द्वारा दसवीं अनुसूची के रूप

में दल-बदल विरोधी कानून लागू किया गया और 2003 के 91वें संशोधन द्वारा इसे और सख्त बनाया गया, फिर भी व्यवहार में इसकी कई संवैधानिक कमियाँ और व्यावहारिक विफलताएँ सामने आई हैं। अकादमिक दृष्टि से इस शोध की आवश्यकता इसलिए है कि कानून की इन कमियों–जैसे अध्यक्ष के निर्णयों में देरी व पक्षपात, विलय प्रावधान का दुरुपयोग, सामूहिक इस्तीफों के माध्यम से सदन की संख्यात्मक शक्ति में हेरफेर, तथा व्हिप के उल्लंघन पर प्रभावी कार्रवाई की कमी–का गहन राजनीतिक विश्लेषण किया जाए। यह अध्ययन न केवल संवैधानिक प्रावधानों की सैद्धांतिक समीक्षा करेगा, बल्कि उनके व्यावहारिक क्रियान्वयन में आने वाली बाधाओं को भी उजागर करेगा, जिससे राजनीतिक विज्ञान और संवैधानिक अध्ययन के क्षेत्र में नए अंतर्दृष्टि प्राप्त हो सकें।

लोकतांत्रिक महत्व की दृष्टि से दल-बदल सीधे मतदाताओं के जनादेश का अनादर करता है। जब निर्वाचित प्रतिनिधि अपने दल को छोड़कर दूसरे दल में शामिल हो जाते हैं, तो वे उस जनसमर्थन का उल्लंघन करते हैं जिसने उन्हें सदन में पहुँचाया था। इससे सरकारों की स्थिरता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है–अक्सर अल्पमत वाली सरकारें दल-बदल के बल पर सत्ता में आती हैं या बहुमत वाली सरकारें गिर जाती हैं। इसके अतिरिक्त, संसदीय नैतिकता और दलीय अनुशासन कमजोर होता है, जिससे लोकतांत्रिक संस्थाओं में जनता का विश्वास घटता है। हाल के वर्षों में कर्नाटक, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, पश्चिम बंगाल और दिल्ली जैसे राज्यों में हुई घटनाएँ इस बात की पुष्टि करती हैं कि दल-बदल न केवल राजनीतिक अस्थिरता उत्पन्न करता है, बल्कि लोकतंत्र की मूल भावना को भी ठेस पहुँचाता है।

नीतिगत प्रासंगिकता की दृष्टि से यह शोध चुनावी सुधारों और विधायी अखंडता को बनाए रखने के लिए ठोस एवं व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत करने का प्रयास करेगा। इसमें अध्यक्ष की भूमिका को निष्पक्ष बनाने, विलय प्रावधान को और स्पष्ट करने, सामूहिक इस्तीफों पर अंकुश लगाने, तथा दल-बदलुओं को तत्काल अयोग्य घोषित करने जैसे उपायों पर चर्चा की जाएगी। इस प्रकार का अध्ययन नीति-निर्माताओं, विधि-वेत्ताओं और राजनीतिक दलों के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकता है, ताकि भारतीय संसदीय लोकतंत्र को अधिक स्थिर, पारदर्शी और जनादेश के प्रति जवाबदेह बनाया जा सके।

समस्या का कथन (Statement of the Problem)

भारतीय संविधान की दसवीं अनुसूची के अंतर्गत दल-बदल विरोधी कानून के अस्तित्व में होने के बावजूद, व्यवहार में इसकी कई चोर-गलियाँ (loopholes) बनी हुई हैं, जिनका राजनीतिक दुरुपयोग लगातार हो रहा है। सबसे प्रमुख समस्या व्हिप का उल्लंघन है—जहाँ विधायक या सांसद दल के आधिकारिक निर्देशों के विरुद्ध मतदान करते हैं या अनुपस्थित रहते हैं, फिर भी अयोग्यता की प्रक्रिया में देरी या पक्षपात के कारण वे बच निकलते हैं। दूसरी गंभीर समस्या विधायकों का सामूहिक इस्तीफा है। कई राज्यों में विधायक जानबूझकर इस्तीफा देकर सदन की कुल सदस्य संख्या घटा देते हैं, जिससे बहुमत का अंक कम हो जाता है और अल्पमत वाली सरकार आसानी से सत्ता में बनी रहती है या नई सरकार बन जाती है। यह तरीका दसवीं अनुसूची के प्रावधानों को दरकिनार करने का एक प्रभावी साधन बन गया है।

तीसरी और सर्वाधिक चर्चित समस्या अध्यक्ष (Speaker) के पद का राजनीतिकरण है। दसवीं अनुसूची के तहत दल-बदल के मामलों का अंतिम निर्णय अध्यक्ष/सभापति करते हैं, किंतु व्यवहार में अध्यक्ष अक्सर सत्ताधारी दल के प्रति झुकाव रखते हैं। परिणामस्वरूप, अयोग्यता याचिकाओं पर निर्णयों में लंबी देरी होती है, या फिर पक्षपाती फैसले दिए जाते हैं। इससे कानून की निष्पक्षता और प्रभावशीलता दोनों प्रभावित होती हैं। इन चोर-गलियों के कारण सरकारों की स्थिरता पर गंभीर संकट उत्पन्न होता है—एक ओर निर्वाचित सरकारें समय से पहले गिर जाती हैं, दूसरी ओर दल-बदल के बल पर बनी सरकारें लोकतांत्रिक वैधता खो बैठती हैं। इस प्रकार, दल-बदल विरोधी कानून के बावजूद भारतीय संसदीय लोकतंत्र में राजनीतिक अस्थिरता, जनादेश का अनादर और संस्थागत कमजोरी की समस्या बनी हुई है, जिसका गहन अध्ययन और समाधान आवश्यक है।

शोध के उद्देश्य (Objectives of the Study)

- भारतीय राजनीति में दल-बदल के प्रमुख सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक कारणों की पहचान करना।
- 10वीं अनुसूची के क्रियान्वयन में आने वाली कानूनी व संस्थागत बाधाओं का मूल्यांकन करना।
- अध्यक्ष (Speaker) की भूमिका और न्यायिक समीक्षा (Judicial Review) की प्रभावशीलता का विश्लेषण करना।

- दल-बदल की समस्या से निपटने के लिए सुधारात्मक उपाय प्रस्तुत करना।

शोध प्रश्न (Research Questions)

- भारत में राजनीतिक दल-बदल को बढ़ावा देने वाले मूल राजनीतिक और व्यक्तिगत कारण क्या हैं?
- दल-बदल विरोधी कानून (10वीं अनुसूची) संसदीय लोकतंत्र को स्थिरता प्रदान करने में कहाँ तक सफल रहा है?
- क्या अध्यक्ष (Speaker) का पद दल-बदल से जुड़ी याचिकाओं पर निष्पक्ष निर्णय लेने में सक्षम है?

शोध की परिकल्पना (Research Hypotheses)

- **परिकल्पना 1 :** वैचारिक प्रतिबद्धता की कमी और सत्ता व लाभ के पद का लालच दल-बदल का प्राथमिक राजनीतिक कारण है।
- **परिकल्पना 2 :** दल-बदल विरोधी कानून में अध्यक्ष (Speaker) को दी गई असीमित और समय-सीमा रहित शक्तियाँ कानून के दुरुपयोग को बढ़ावा देती हैं।
- **परिकल्पना 3 :** दल-बदल से जुड़ी अयोग्यता का निर्णय किसी स्वतंत्र निकाय (जैसे निर्वाचन आयोग) को सौंपने से इस समस्या में कमी आ सकती है।

शोध प़द्धति (Research Methodology)

शोध का प्रकार: विश्लेषणात्मक, कानूनी और गुणात्मक (Analytical, Doctrinal & Qualitative Research)।

- **तथ्य के स्रोत:**
  - *प्राथमिक स्रोत:* भारत का संविधान (10वीं अनुसूची), सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय (जैसे- किहोतो होलोहन केस), विधि आयोग की रिपोर्ट और चुनाव आयोग की सिफारिशें।
  - *द्वितीयक स्रोत:* मानक राजनीतिक विज्ञान की पुस्तकें, सहकर्मी-समीक्षित (Peer-reviewed) अकादमिक जर्नल्स और संसदीय बहसें।

साहित्य की समीक्षा (Review of Literature)

भारतीय लोकतंत्र में दल-बदल की प्रवृत्ति और उसके नियंत्रण संबंधी अध्ययन का एक समृद्ध साहित्य उपलब्ध है, जिसमें संवैधानिक प्रावधानों, न्यायिक व्याख्याओं, विधि आयोग की

रिपोर्टों तथा प्रमुख राजनीतिक-संवैधानिक विचारकों के शोध कार्यों का महत्वपूर्ण योगदान है। यह साहित्य दल-बदल को न केवल एक कानूनी समस्या बल्कि लोकतांत्रिक जनादेश, दलीय अनुशासन और संसदीय स्थिरता से जुड़े गहन राजनीतिक प्रश्न के रूप में प्रस्तुत करता है।

दल-बदल की प्रवृत्ति पर सबसे प्रारंभिक और प्रभावशाली अध्ययन सुभाष सी. कश्यप का माना जाता है। उनकी पुस्तक **Politics of Defection (1969) और बाद में Anti-Defection Law and Parliamentary Privileges** (1993) में उन्होंने 1967 के बाद की घटनाओं–विशेषकर "आया राम, गया राम" संस्कृति–का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत किया। कश्यप ने दल-बदल को भारतीय राजनीति की अपरिपक्वता और अवसरवादिता का परिणाम बताया तथा दसवीं अनुसूची की व्यावहारिक कमियों को रेखांकित किया। इसी क्रम में ग्रेनविल ऑस्टिन की **Working a Democratic Constitution: A History of the Indian Experience** (1999) में दल-बदल को संविधान की कार्यप्रणाली पर पड़ने वाले प्रभावों के संदर्भ में देखा गया है। हाल के शोधों में दार्शन **गुरुवयुरप्पन** का लेख "Rethinking Defection: An Analysis of Anti-defection Laws in India" (Parliamentary Affairs, 2023) उल्लेखनीय है, जिसमें उन्होंने तर्क दिया है कि पार्टी-आधारित दल-बदल विरोधी कानून सरकारी स्थिरता सुनिश्चित करने में पूरी तरह सफल नहीं हुए हैं, बल्कि विधायकों की प्रतिनिधि स्वतंत्रता को सीमित कर देते हैं। मिलन वैष्णव का अध्ययन "Democracy and Defections" (International Journal of Constitutional Law, 2024) भी इस बात पर बल देता है कि दसवीं अनुसूची ने शक्ति को व्यक्तिगत विधायक से पार्टी नेतृत्व की ओर स्थानांतरित कर दिया है।

विधि आयोग की रिपोर्टें चुनावी सुधारों और दल-बदल कानून के संबंध में सबसे प्रामाणिक संस्थागत दस्तावेज मानी जाती हैं। विधि आयोग की **170वीं रिपोर्ट** (1999) - **Reform of the Electoral Laws** - में दसवीं अनुसूची के अनुभव को **"असुखद"** बताया गया। रिपोर्ट में स्पष्ट रूप से कहा गया कि **'स्प्लिट'** (एक-तिहाई विभाजन) संबंधी प्रावधान का अत्यधिक दुरुपयोग हुआ है। आयोग ने पैराग्राफ 3 (स्प्लिट) और पैराग्राफ 4 (मर्जर) दोनों को हटाने की सिफारिश की, ताकि राजनीतिक मानकों को बनाए रखा जा सके और जटिलताओं को कम किया जा सके। इसके अतिरिक्त, चुनाव-पूर्व गठबंधन को भी दसवीं अनुसूची के प्रयोजनों के लिए "राजनीतिक दल" मानने का प्रस्ताव रखा गया। यद्यपि 91वें संविधान संशोधन (2003) ने केवल स्प्लिट प्रावधान को हटाया, मर्जर प्रावधान को बनाए रखा, फिर भी 170वीं रिपोर्ट के सुझाव आज भी प्रासंगिक बने हुए हैं।

विधि आयोग की **255वीं रिपोर्ट (2015) - Electoral Reforms** - ने दल-बदल कानून को और अधिक प्रभावी बनाने पर ध्यान केंद्रित किया। इस रिपोर्ट में सबसे महत्वपूर्ण सिफारिश यह थी कि दल-बदल के आधार पर अयोग्यता संबंधी प्रश्नों का निर्णय अध्यक्ष/सभापति के बजाय राष्ट्रपति या राज्यपाल द्वारा किया जाए, जो निर्वाचन आयोग की सलाह पर कार्य करें। इससे अध्यक्ष के पद की निष्पक्षता और गरिमा की रक्षा हो सकेगी। रिपोर्ट ने राजनीतिक दलों में आंतरिक लोकतंत्र को मजबूत करने, पार्टी संविधान, आंतरिक चुनाव और उम्मीदवार चयन की प्रक्रियाओं को विनियमित करने पर भी जोर दिया। ये सिफारिशें दिनेश गोस्वामी समिति (1990) और राष्ट्रीय संविधान समीक्षा आयोग (NCRWC, 2002) की पूर्ववर्ती अनुशंसाओं से मेल खाती हैं।

न्यायिक साहित्य में **किहोतो होलोहन बनाम जचिल्लू** (1992) का विशेष महत्व है। इस ऐतिहासिक निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय ने दसवीं अनुसूची की संवैधानिक वैधता को बरकरार रखा, किंतु पैराग्राफ 7 (न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र को पूरी तरह बाहर करने वाला प्रावधान) को असंवैधानिक ठहराया। न्यायालय ने स्पष्ट किया कि अध्यक्ष के निर्णयों की सीमित न्यायिक समीक्षा (क्षेत्राधिकार संबंधी त्रुटि, दुर्भावना, प्राकृतिक न्याय का उल्लंघन या मनमानी) संभव है। बाद के निर्णयों–जैसे **केशम मेघाचंद्र सिंह** (2020) और कर्नाटक एवं महाराष्ट्र संबंधी मामलों–ने अध्यक्ष की भूमिका और समयबद्ध निर्णय की आवश्यकता को और रेखांकित किया है।

इसके अतिरिक्त, एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म्स (ADR) के अनुभवजन्य अध्ययन, विधी सेंटर फॉर लीगल पॉलिसी की रिपोर्ट **Anatomy of India's Anti-Defection Law** तथा विभिन्न शोधार्थियों के शोध-प्रबंध (जैसे वीरेंद्र सिंह और रतन सिंह वर्मा के शोध) ने दल-बदल की व्यावहारिक विफलताओं, सामूहिक इस्तीफों और विलय प्रावधान के दुरुपयोग को आंकड़ों के साथ उजागर किया है। समग्र रूप से, उपलब्ध साहित्य इस बात पर सहमत है कि यद्यपि दल-बदल विरोधी कानून ने व्यक्तिगत दल-बदल को कुछ हद तक नियंत्रित किया है, परंतु इसकी संरचनात्मक कमियाँ–अध्यक्ष की भूमिका, विलय प्रावधान और सामूहिक इस्तीफे–अभी भी राजनीतिक अस्थिरता और जनादेश के अनादर का कारण बनी हुई हैं। यह शोध इन्हीं अध्ययनों की नींव पर आगे बढ़ते हुए दल-बदल के कारणों और निवारण के उपायों का समकालीन विश्लेषण प्रस्तुत करने का प्रयास करता है।

मुख्य विषय-वस्तु का विश्लेषणात्मक विवरण (Analytical Content & Discussion)

भारतीय संसदीय लोकतंत्र में दल-बदल की समस्या केवल कानूनी प्रावधानों की कमी का परिणाम नहीं है, बल्कि गहरे राजनीतिक, आर्थिक और संस्थागत कारणों से जुड़ी हुई है। इस खंड में दल-बदल के मूल कारणों, दसवीं अनुसूची की संरचनात्मक सीमाओं तथा न्यायपालिका के दृष्टिकोण का विश्लेषणात्मक विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

a. दल-बदल के राजनीतिक व आर्थिक कारण

दल-बदल का सबसे प्रमुख प्रेरक तत्व सत्ता और लाभ के पद की लालसा है। निर्वाचित प्रतिनिधि अक्सर मंत्री पद, सरकारी आवास, सुरक्षा, वित्तीय लाभ या अन्य सुविधाओं के प्रलोभन में अपने दल को छोड़ देते हैं। 1967 से 1971 के बीच हुई घटनाओं में 212 दल-बदलू विधायक/सांसद मंत्री बने थे, जो इस प्रवृत्ति की प्रारंभिक पुष्टि करता है। वर्तमान में भी मध्य प्रदेश (2020), कर्नाटक (2019), महाराष्ट्र (2022) और पश्चिम बंगाल (2026) जैसी घटनाओं में दल-बदलुओं को मंत्री पद या महत्वपूर्ण जिम्मेदारियाँ दी गईं। आर्थिक दृष्टि से, चुनावी खर्च की बढ़ती लागत और राजनीतिक वित्त की अपारदर्शिता भी दल-बदल को बढ़ावा देती है। कई मामलों में केंद्रीय एजेंसियों के दबाव या भ्रष्टाचार के आरोपों से बचने के लिए भी दल-बदल होता देखा गया है।

दूसरा महत्वपूर्ण कारण राजनीतिक दलों में आंतरिक लोकतंत्र और वैचारिक स्पष्टता का अभाव है। अधिकांश भारतीय दल व्यक्तित्व-केंद्रित या परिवार-केंद्रित हैं, जहाँ शीर्ष नेतृत्व के एकाधिकार के कारण निचले स्तर के नेताओं के लिए असहमति व्यक्त करने का कोई वैध माध्यम नहीं बचता। आंतरिक चुनाव, पारदर्शी टिकट वितरण और खुली चर्चा की कमी के कारण असंतुष्ट विधायक दल छोड़ने को ही एकमात्र विकल्प मानते हैं। शोध अध्ययनों (जैसे प्रदीप छिब्बर आदि) से स्पष्ट होता है कि मजबूत संगठनात्मक संरचना और आंतरिक लोकतंत्र वाले दलों में दल-बदल कम होता है, जबकि कमजोर संगठन वाले दलों में यह अधिक प्रचलित है। वैचारिक स्पष्टता की कमी ने भी राजनीति को अवसरवादी बना दिया है–आज दल-बदल अक्सर विचारधारा के बजाय सत्ता और संसाधनों की प्राप्ति से प्रेरित होता है।

टिकट वितरण में पारदर्शिता की कमी तीसरा प्रमुख कारण है। उच्च कमान द्वारा मनमाने ढंग से टिकट काटने या परिवारवाद के आधार पर टिकट देने से कई नेता असंतुष्ट हो जाते हैं और दूसरे दल में अवसर तलाशते हैं। इससे न केवल दल-बदल बढ़ता है, बल्कि मतदाताओं का विश्वास भी कम होता है।

b. संवैधानिक प्रावधान एवं 10वीं अनुसूची की सीमाएँ

1985 में 52वें संशोधन द्वारा जोड़ी गई दसवीं अनुसूची का उद्देश्य दल-बदल को रोकना था, किंतु व्यावहारिक रूप में इसकी कई सीमाएँ उजागर हुई हैं। 91वें संविधान संशोधन (2003) ने एक-तिहाई विभाजन (स्प्लिट) की छूट को हटाकर कानून को सख्त बनाया और केवल दो-तिहाई विलय को संरक्षण दिया। साथ ही मंत्रिपरिषद के आकार को 15 प्रतिशत तक सीमित किया तथा दल-बदलुओं को मंत्री पद से वंचित किया। हालाँकि, विलय प्रावधान का दुरुपयोग आज भी जारी है—कई बार विधायक जानबूझकर दो-तिहाई संख्या एकत्र कर "विलय" का दावा करते हैं।

व्हिप का दुरुपयोग एक और गंभीर समस्या है। दसवीं अनुसूची के तहत दल के निर्देश के विरुद्ध मतदान अयोग्यता का आधार है, किंतु व्यवहार में व्हिप का उपयोग अक्सर सदस्यों की स्वतंत्र सोच को दबाने के लिए किया जाता है। इससे संसदीय बहस और विवेक की गुंजाइश कम हो जाती है।

अध्यक्ष (Speaker) की पक्षपातपूर्ण भूमिका कानून की सबसे बड़ी कमजोरी है। दसवीं अनुसूची के तहत अयोग्यता का निर्णय अध्यक्ष करते हैं, जो प्रायः सत्ताधारी दल से जुड़े होते हैं। परिणामस्वरूप, अयोग्यता याचिकाओं पर निर्णयों में लंबी देरी होती है या पक्षपाती फैसले दिए जाते हैं। मणिपुर (2017-2020) में अध्यक्ष ने लगभग तीन वर्ष तक याचिकाओं पर निर्णय नहीं लिया। सामूहिक इस्तीफों के जरिए भी कानून की अनदेखी की जाती है—विधायक इस्तीफा देकर सदन की सदस्य संख्या घटा देते हैं, जिससे बहुमत का अंक कम हो जाता है और अल्पमत वाली सरकार आसानी से सत्ता में बनी रहती है। कर्नाटक (2019) और मध्य प्रदेश (2020) में इस रणनीति का व्यापक उपयोग देखा गया।

c. न्यायपालिका का दृष्टिकोण

सर्वोच्च न्यायालय ने दल-बदल संबंधी मामलों में सक्रिय भूमिका निभाई है। **किहोतो होलोहन बनाम जचिल्लू** (1992) में पाँच न्यायाधीशों की पीठ ने दसवीं अनुसूची की संवैधानिक वैधता को बरकरार रखा, किंतु पैराग्राफ 7 (न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र को पूरी

तरह बाहर करने वाला प्रावधान) को असंवैधानिक ठहराया। न्यायालय ने स्पष्ट किया कि अध्यक्ष के निर्णयों की सीमित न्यायिक समीक्षा–क्षेत्राधिकार संबंधी त्रुटि, दुर्भावना, प्राकृतिक न्याय का उल्लंघन या मनमानी–संभव है। इस निर्णय ने अध्यक्ष को अर्ध-न्यायिक प्राधिकरण माना और न्यायिक हस्तक्षेप का मार्ग खोला।

नबाम रेबिया बनाम डिप्टी स्पीकर (2016) अरुणाचल प्रदेश के राजनीतिक संकट से संबंधित था। पाँच न्यायाधीशों की पीठ ने कहा कि जब अध्यक्ष के विरुद्ध हटाने का प्रस्ताव लंबित हो, तो वह दसवीं अनुसूची के तहत अयोग्यता संबंधी याचिकाओं पर निर्णय नहीं कर सकता। न्यायालय ने इसे संविधान के अनुच्छेद 179(c) के विरुद्ध माना, क्योंकि इससे "तब के सभी सदस्यों" के मतदान के अधिकार पर प्रभाव पड़ता है। इस निर्णय ने अध्यक्ष की शक्तियों पर महत्वपूर्ण अंकुश लगाया।

केशम मेघाचंद्र सिंह बनाम मणिपुर विधानसभा अध्यक्ष (2020) में सर्वोच्च न्यायालय ने अध्यक्ष की निष्क्रियता पर कड़ी टिप्पणी की। न्यायालय ने कहा कि अयोग्यता याचिकाओं का निर्णय उचित समय (सामान्यतः तीन माह) के भीतर होना चाहिए। अध्यक्ष द्वारा लगभग तीन वर्ष तक निर्णय न लेने पर न्यायालय ने असाधारण शक्तियों का प्रयोग करते हुए संबंधित विधायक को मंत्री पद से हटाया और विधानसभा में प्रवेश पर रोक लगाई। न्यायालय ने संसद से अपील की कि वह अध्यक्ष के स्थान पर सेवानिवृत्त न्यायाधीश की अध्यक्षता वाला स्वतंत्र अधिकरण गठित करने पर विचार करे।

इन निर्णयों से स्पष्ट होता है कि न्यायपालिका ने दसवीं अनुसूची की वैधता को स्वीकार करते हुए भी इसकी व्यावहारिक कमियों–विशेषकर अध्यक्ष की भूमिका और निर्णयों में देरी–को स्वीकार किया है। हालाँकि, न्यायालय बार-बार संसद से कानून में सुधार की अपेक्षा करता रहा है, किंतु राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी के कारण ये सुझाव अभी तक लागू नहीं हो पाए हैं।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि कि दल-बदल की समस्या कानूनी प्रावधानों से अधिक राजनीतिक संस्कृति, दलीय संरचना और संस्थागत कमजोरियों से जुड़ी हुई है। दसवीं अनुसूची ने व्यक्तिगत दल-बदल को कुछ हद तक नियंत्रित किया है, किंतु सामूहिक रणनीतियों, विलय प्रावधान के दुरुपयोग और अध्यक्ष की पक्षपातपूर्ण भूमिका ने इसे आंशिक रूप से निष्प्रभावी बना दिया है। न्यायपालिका के सक्रिय हस्तक्षेप ने कुछ राहत दी है, परंतु स्थायी समाधान के लिए संवैधानिक और राजनीतिक सुधारों की आवश्यकता बनी हुई है।

चुनौतियाँ और सीमाएँ (Limitations of the Study)

यह अध्ययन मुख्य रूप से उपलब्ध द्वितीयक स्रोतों–विधि आयोग की रिपोर्टों, सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों, संवैधानिक प्रावधानों, समाचार रिपोर्टों और पूर्व शोध कार्यों–पर आधारित है। प्राथमिक आंकड़ों, जैसे विधायकों या पार्टी पदाधिकारियों से सीधे साक्षात्कार, का अभाव इसकी एक सीमा है। राजनीतिक दलों के आंतरिक अनौपचारिक समझौतों, वित्तीय लेन-देन या दबाव की रणनीतियों से संबंधित सटीक डेटा प्राप्त करना व्यावहारिक रूप से कठिन है, क्योंकि ये प्रक्रियाएँ प्रायः गोपनीय होती हैं। इसके अतिरिक्त, हाल की घटनाओं के आंकड़े समय के साथ बदल सकते हैं, जिससे निष्कर्षों की पूर्ण समकालीनता प्रभावित हो सकती है। इन सीमाओं के बावजूद, उपलब्ध स्रोतों के आधार पर समस्या का वस्तुनिष्ठ विश्लेषण संभव हुआ है।

निवारण के उपाय एवं सुझाव (Suggestions & Recommendations)

दल-बदल की समस्या के प्रभावी नियंत्रण के लिए निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए जाते हैं:

- प्रथम, अध्यक्ष की शक्तियों का हस्तांतरण आवश्यक है। अयोग्यता संबंधी निर्णयों का अधिकार अध्यक्ष/सभापति से हटाकर राष्ट्रपति या राज्यपाल को दिया जाए, जो निर्वाचन आयोग की सलाह पर कार्य करें। इससे निर्णयों में निष्पक्षता और राजनीतिक दबाव से मुक्ति सुनिश्चित होगी।
- द्वितीय, दल-बदल याचिकाओं पर निर्णय के लिए तीन महीने की निश्चित वैधानिक समय-सीमा निर्धारित की जाए। समय-सीमा का उल्लंघन होने पर स्वतः अयोग्यता या न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप का प्रावधान हो, ताकि देरी की रणनीति निष्प्रभावी हो जाए।
- तृतीय, व्हिप का दायरा सीमित किया जाए। व्हिप का प्रयोग केवल अविश्वास प्रस्ताव, बजट या सरकार के अस्तित्व से सीधे जुड़े मुद्दों तक ही हो। अन्य विषयों पर सदस्यों को स्वतंत्र मतदान की अनुमति दी जाए, जिससे संसदीय विवेक और आंतरिक लोकतंत्र को बढ़ावा मिले।
- चतुर्थ, दल-बदल के आधार पर अयोग्य घोषित या सामूहिक इस्तीफा देने वाले सदस्यों को उस सदन के शेष कार्यकाल तक कोई भी चुनाव लड़ने से प्रतिबंधित किया जाए। इससे दल-बदल के तात्कालिक राजनीतिक लाभ समाप्त होंगे और जनादेश के प्रति जवाबदेही बढ़ेगी।

इन सुधारों के साथ-साथ राजनीतिक दलों में आंतरिक लोकतंत्र को मजबूत करने और टिकट वितरण में पारदर्शिता लाने से दल-बदल की प्रवृत्ति पर दीर्घकालिक अंकुश लगाया जा सकता है।

निष्कर्ष (Conclusion)

प्रस्तुत शोध भारतीय संसदीय लोकतंत्र में राजनीतिक दल-बदल की समस्या का व्यापक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। शोध के निर्धारित उद्देश्यों, शोध प्रश्नों और परिकल्पनाओं के आलोक में किए गए अध्ययन से स्पष्ट होता है कि दल-बदल न केवल एक कानूनी चुनौती है, बल्कि गहरी राजनीतिक संस्कृति, दलीय संरचना और संस्थागत कमजोरियों का परिणाम है।

- शोध के प्रथम उद्देश्य–दल-बदल के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक कारणों की पहचान–के अंतर्गत पाया गया कि सत्ता और लाभ के पद की लालसा, राजनीतिक दलों में आंतरिक लोकतंत्र व वैचारिक स्पष्टता का अभाव, तथा टिकट वितरण में पारदर्शिता की कमी प्रमुख प्रेरक तत्व हैं। वैचारिक प्रतिबद्धता की कमी ने राजनीति को अवसरवादी बना दिया है, जहाँ व्यक्तिगत लाभ और सत्ता प्राप्ति दल-बदल का मूल आधार बन गए हैं। इससे **परिकल्पना 1** की पुष्टि होती है कि वैचारिक प्रतिबद्धता की कमी और सत्ता-लाभ का लालच दल-बदल का प्राथमिक राजनीतिक कारण है।
- द्वितीय उद्देश्य–10वीं अनुसूची के क्रियान्वयन में कानूनी व संस्थागत बाधाओं का मूल्यांकन–से स्पष्ट हुआ कि यद्यपि 52वें और 91वें संविधान संशोधनों ने कानून को सख्त बनाया, फिर भी विलय प्रावधान का दुरुपयोग, व्हिप का अत्यधिक प्रयोग, सामूहिक इस्तीफों की रणनीति और निर्णयों में देरी जैसी समस्याएँ बनी हुई हैं। परिणामस्वरूप, कानून संसदीय स्थिरता प्रदान करने में केवल आंशिक रूप से सफल रहा है। इससे शोध प्रश्न–"दल-बदल विरोधी कानून संसदीय लोकतंत्र को स्थिरता प्रदान करने में कहाँ तक सफल रहा है?"–का उत्तर मिलता है कि सफलता सीमित रही है।
- तृतीय उद्देश्य–अध्यक्ष की भूमिका और न्यायिक समीक्षा की प्रभावशीलता का विश्लेषण–से यह सिद्ध होता है कि अध्यक्ष का पद संरचनात्मक रूप से पक्षपातपूर्ण है। **किहोतो होलोहन (1992), नबाम रेबिया (2016)** और **केशम मेघाचंद्र सिंह (2020)** जैसे निर्णयों में सर्वोच्च न्यायालय ने अध्यक्ष की शक्तियों पर अंकुश लगाया तथा समयबद्ध निर्णय और स्वतंत्र तंत्र की आवश्यकता पर बल दिया। इससे **परिकल्पना 2** की पुष्टि होती है कि

अध्यक्ष को दी गई असीमित और समय-सीमा रहित शक्तियाँ कानून के दुरुपयोग को बढ़ावा देती हैं। शोध प्रश्न–"क्या अध्यक्ष का पद निष्पक्ष निर्णय लेने में सक्षम है?"–का स्पष्ट उत्तर नकारात्मक है।

- चतुर्थ उद्देश्य–सुधारात्मक उपाय प्रस्तुत करना–के अंतर्गत यह निष्कर्ष निकाला गया कि अध्यक्ष की शक्तियों को राष्ट्रपति/राज्यपाल (निर्वाचन आयोग की सलाह पर) को हस्तांतरित करना, तीन महीने की वैधानिक समय-सीमा तय करना, व्हिप का दायरा सीमित करना तथा दल-बदलुओं को शेष कार्यकाल तक चुनाव लड़ने से प्रतिबंधित करना प्रभावी कदम हो सकते हैं। इससे **परिकल्पना 3** की भी पुष्टि होती है कि अयोग्यता का निर्णय किसी स्वतंत्र निकाय को सौंपने से समस्या में कमी आ सकती है।

समग्र रूप से, प्रस्तुत शोध स्थापित करता है कि दल-बदल विरोधी कानून की सफलता केवल कानूनी प्रावधानों पर निर्भर नहीं करती, बल्कि राजनीतिक इच्छाशक्ति, दलीय आंतरिक लोकतंत्र और संस्थागत निष्पक्षता पर भी निर्भर है। दसवीं अनुसूची ने व्यक्तिगत दल-बदल को कुछ हद तक नियंत्रित किया है, किंतु सामूहिक रणनीतियों और संस्थागत कमजोरियों ने इसे अपूर्ण बना दिया है। स्थायी समाधान के लिए संवैधानिक सुधारों के साथ-साथ राजनीतिक संस्कृति में बदलाव आवश्यक है, ताकि जनादेश की पवित्रता और संसदीय लोकतंत्र की स्थिरता सुनिश्चित की जा सके। यह अध्ययन भविष्य के शोध और नीति-निर्माण के लिए एक ठोस आधार प्रदान करता है।

संदर्भ सूची (References)

- ऑस्टिन, जी. (1999). *लोकतांत्रिक संविधान का संचालन: भारतीय अनुभव,* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
- भारत का संविधान। (1950). *दसवीं अनुसूची (संविधान (बावनवाँ संशोधन) अधिनियम,* 1985 तथा संविधान (इक्यानबेवाँ संशोधन) अधिनियम, 2003 द्वारा यथासंशोधित)।
- गुरुवयुरप्पन, डी. (2023). दल-बदल पर पुनर्विचार: भारत में दल-बदल विरोधी कानूनों का विश्लेषण, **पार्लियामेंटरी अफेयर्स, 76**(2), 443।
- काश्यप, एस. सी. (1969). *दल-बदल की राजनीति: भारत में राज्य राजनीति का एक अध्ययन,* नेशनल पब्लिशिंग हाउस।
- काश्यप, एस. सी. (1974). *सत्ता की राजनीति: भारत में दल-बदल और राज्य राजनीति,* (संशोधित संस्करण), नेशनल पब्लिशिंग हाउस।

- काश्यप, एस. सी. (1993). *दल-बदल विरोधी कानून और संसदीय विशेषाधिकार*, एन. एम. त्रिपाठी।
- केशम मेघाचंद्र सिंह बनाम माननीय अध्यक्ष, मणिपुर विधानसभा, (2020) 1 एससीसी 1 (भारत का सर्वोच्च न्यायालय)।
- किहोतो होलोहन बनाम जचिल्लू, 1992 सप्लीमेंट (2) एससीसी 651 (भारत का सर्वोच्च न्यायालय)।
- विधि आयोग, भारत। (1999). निर्वाचन विधियों में सुधार पर 170वीं रिपोर्ट, भारत सरकार।
- विधि आयोग, भारत। (2015). ,निर्वाचन सुधारों पर 255वीं रिपोर्ट, भारत सरकार।
- नबाम रेबिया एवं बमांग फेलिक्स बनाम डिप्टी स्पीकर, अरुणाचल प्रदेश विधानसभा, (2016) 8 एससीसी 1 (भारत का सर्वोच्च न्यायालय)।
- राष्ट्रीय संविधान कार्यप्रणाली समीक्षा आयोग। (2002). राष्ट्रीय संविधान कार्यप्रणाली समीक्षा आयोग की रिपोर्ट, भारत सरकार।
- शर्मा, आर. एवं गुप्ता, एम. (2023). ,भारत के दल-बदल विरोधी कानून की संरचना, विधी सेंटर फॉर लीगल पॉलिसी।
- वैष्णव, एम. (2024). लोकतंत्र और दल-बदल, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ कॉन्स्टिट्यूशनल लॉ, 22, (2), 400-430।
- एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म्स, राजनीतिक दल-बदल एवं चुनावी विश्लेषण संबंधी रिपोर्ट्स।

ISARA INSTITUTE OF MANAGEMENT & PROFESSIONAL STUDIES

RSEARCH GATEWAY

AROGYAM ONLINE

PARIVARTAN PSYCHOLOGY CENTER

भारतीय भाषा, शिक्षा, साहित्य एवं शोध

ISSN 2321 – 9726

WWW.BHARTIYASHODH.COM

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF MANAGEMENT SCIENCE & TECHNOLOGY

ISSN – 2250 – 1959 (0) 2348 – 9367 (P)

WWW.IRJMST.COM

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF COMMERCE, ARTS AND SCIENCE

ISSN 2319 – 9202

WWW.CASIRJ.COM

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF MANAGEMENT SOCIOLOGY & HUMANITIES

ISSN 2277 – 9809 (0) 2348 - 9359 (P)

WWW.IRJMSH.COM

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF SCIENCE ENGINEERING AND TECHNOLOGY

ISSN 2454-3195 (online)

WWW.RJSET.COM

INTEGRATED RESEARCH JOURNAL OF MANAGEMENT, SCIENCE AND INNOVATION

ISSN 2582-5445

WWW.IRJMSI.COM

JOURNAL OF LEGAL STUDIES,POLITICS AND ECONOMICS RESEARCH

WWW.JLPER.COM